मिलेनियम वर्जन के मैसी साहब

❑ संजीव मिश्र

पिछले कुछ वर्ष से उच्च तकनीक के नाम पर कम्प्यूटर विज्ञान का विकास दुनिया भर में पहली प्राथमिकता बन गया है । विकसित देशों में शिक्षा, प्रशासन, मनोरंजन और सबसे बढ़कर व्यापार आज पूर्णत: कम्पयूटर से संचालित है । इस तंत्र की प्रोग्रामिंग के लिए ऐसे दिमागों की जरुरत है जो निरपेक्ष भाव से यांत्रिक प्रक्रिया को समझते हुए परिकल्पना और आकलन कर सकें । ऐसे दिमाग भारत जैसे विकासशील देशों से जा रहे हैं । अमेरिका और यूरोप में लाखों आप्रवासी युवा कम्प्यूटर विज्ञान की दुनिया में डालर बटोर रहे हैं । इन गर्वित 'साहबों' की स्थिति मैकाले के 'बाबू' साहबों से कितनी भिन्न है, इस पर यहां विचार किया जा रहा है ।

अरविन्द कृष्ण की फिल्म ''मैसी साहब'' आपने देखी होगी। एक आदिवासी युवक साहब होने की इच्छा में ईसाई बन जाता है। पढ़ाई-लिखाई करके टूटी-फूटी अंग्रेजी सीख लेता है । ब्रिटिश सरकार के दफ्तर में क्लर्क की नौकरी पा लेता है । पैंट शर्ट ही नहीं बल्कि हैट भी पहनता है । उसका आग्रह है कि उसके गांव वाले उसे साहब मानें । सरकारी नौकरी, साहबों से सीधी बातचीत की क्षमता और अजीबोगरीब पहनावे के रोब में उसे 'साहब' कहा भी जाता है। लेकिन अंतत: साहबों की नजर में वह एक कौतुक भरा और उपयोगी उपकरण मात्र रहता है, जो न केवल उनके तमाम काम और स्वार्थ साधता है बल्कि जरूरत पड़ने पर उसे गलत काम करने का माध्यम और बाद में बलि का बकरा भी बनाया जा सकता है, बनाया जाता भी है । ये फिल्म ब्रिटिश राज में या कि किसी भी उपनिवेश में अपनी जड़ों से कटने और दूसरे समाज में शामिल न हो पाने की चिरंतन त्रासदी का चित्रण है ।

यहां इस फिल्म का उल्लेख इसलिए है कि एक बार ब्रिटिश शासन की भारत में शिक्षा नीति और उसके परिणामों की याद ताजा हो सके । आप जानते ही हैं कि लार्ड मैकाले की इस शिक्षा नीति का उद्देश्य भारत में अंग्रेजी पढ़ा लिखा ऐसा वर्ग तैयार करना था जो ब्रिटिश शासन को सस्ते क्लर्क मुहैया करा सके । ये क्लर्क न केवल अंग्रेजी राज के वफादार हों बल्कि अपने को सामान्य हिन्दुस्तानी समाज से बेहतर मानें तथा ब्रिटिश व्यवस्था को पुष्ट करने के, उनके उपनिवेश का संचालन करने के कारगर उपकरण सिद्ध हो सकें ।

इस शिक्षा नीति के सफल नतीजे भी सामने आये । भारत में मध्यमवर्गीय 'बाबू' वर्ग तैयार हुआ। यह 'बाबू साहब' सरकारी नौकरी करता था। पतलून पहनता था। अंग्रेजों के मुकाबले बहुत कम लेकिन तत्कालीन समाज के लिहाज से काफी अच्छी तनख्वाह पाता था। अंग्रेजों की टक्कर की, बल्कि अक्सर उनके मुकाबले बेहतर अंग्रेजी लिखता था और नैतिक, सामाजिक, सौन्दर्यपरक दृष्टि से विहीन था । इन क्षेत्रों में उसकी शिक्षा प्रणाली ने यही सिखाया था कि जो अंग्रेज सही और सुन्दर मानते हैं वही श्रेष्ठ है। इतना जानना उसके लिए पर्याप्त था और कुल मिलाकर वह अपनी स्थिति से काफी संतुष्ट और कृतार्थ था । तत्कालीन समाज में अंतत: पढ़ लिख कर बाबू साहब बन जाना ही परम श्रेयस्कर होता चला गया और हाल तक बना रहा (आई.ए.एस. और क्लर्क दोनों अंतत: अलग-अलग स्तरों के बाबू साहब ही हैं) ।

लेकिन अब कई लोगों को लग सकता है कि स्थिति बदल रही है । आज के युवाओं का लक्ष्य सरकारी नौकरियां नहीं बल्कि कारपोरेट जगत के विभिन्न कैरियर और कम्प्यूटर व इलेक्ट्रानिक की दुनिया है। लेकिन ध्यान से देखें तो हालात में कोई खास फर्क आया नहीं है । आज के मैकाले ज्यादा चतुर और बारीक कातने वाले हैं और आज के बाबुओं की त्रासदी ज्यादा गहरी है ।

पिछले कुछ वर्षों में कम्प्यूटर विज्ञान का विकास और पश्चिमी देशों (याने अमेरिका और उसके आर्थिक सामाजिक विस्तार) में तमाम प्रणालियों का इस तकनीक से संपन्न होना मानव इतिहास में एक प्रमुख सामाजिक परिवर्तन है। विकसित देशों में शिक्षा, प्रशासन, मनोरंजन और सबसे बढकर व्यापार आज पूर्णत: कम्प्यूटरों से संचालित हैं । अब कम्प्यूटर है तो यंत्र ही, चाहे उसका विशाल तंत्र कितना ही जटिल और विश्वव्यापी क्यों न हो। और यह यंत्र-तंत्र काफी विशिष्ट तकनीकी क्षमता से ही संचालित हो सकता है। इसे प्रोग्राम करने के लिए ऐसे दिमाग चाहियें जो बहुत निरपेक्ष भाव से इसकी यांत्रिक प्रक्रिया को समझते हुए इसके उपयोग के लक्ष्य के अनुसार आकलन और परिकल्पना तैयार कर सकें और इस तंत्र को

संचालित कर सकें । अब व्यापार, संचार, मनोरंजन, प्रशासन, लेन देन और शिक्षा देने लेने का काम कौन करे ? लिहाजा इस नये इक्कसवीं सदी के फ्यूचरिस्टिक समाज को भी ऐसे दिमागों की जरूरत पड़ी जो उनके इस तमाम तंत्र संचालन का जिम्मा ले सकें। और ऐसे दिमागों की बहुतायत है, दो सबसे बड़ी आबादी वाले देशों-भारत और चीन में ।

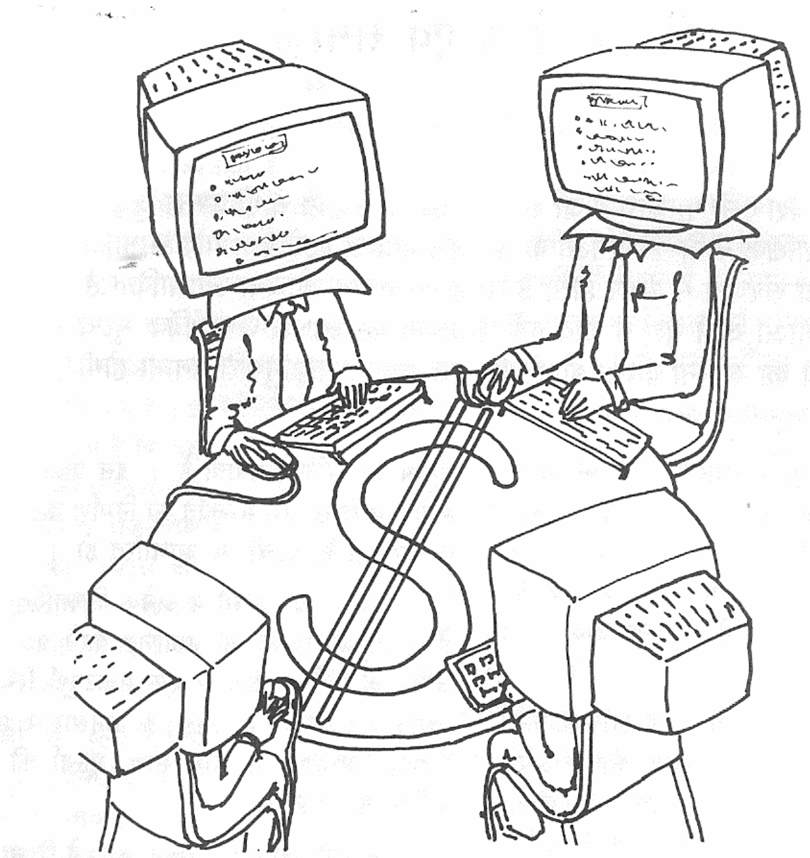
अब देखिये किस प्रकार इन देशों में गत एक दशक में कम्प्यूटर शिक्षा को बढ़ावा दिया गया है । ये बताया गया कि कम्प्यूटर शिक्षा कितनी जरूरी है, और समाज में जितना अधिक कम्प्यूटर साक्षरता बढ़ेगी विकास की गति उतनी ही तेज होगी। उदाहरण के लिए अमेरिका और उसके विस्तार समाज हैं ही । ये बात एक सच बात है लेकिन इसका एक पहलू खास ढंग से छिपाया जाता रहा है । वह ये कि कम्प्यूटर सक्षम समाज का अर्थ ये नहीं है कि वह समाज कम्प्यूटर को चलाना जान गया है, बल्कि ये है कि वह अपनी विभिन्न जरूरतों के लिए कम्प्यूटर का कितना अधिक और बेहतर उपयोग कर सकने में सक्षम है ।

''कम्प्यूटर साइंटिस्ट'' की छवि अत्यधिक गौरव मंडित छवि है हमारे समाज में । कहा जाता है कि यही लोग हैं जो असल में अमेरिका जैसे देशों की व्यवस्था चला रहे हैं – वहां का व्यापार, बैंकिंग, शिक्षा, मनोरंजन, प्रशासन, सैन्य तंत्र, अंतरिक्ष कार्यक्रम – सब जगह भारतीय (और चीनी) कम्प्टर साइन्टिस्टों का जाल फैला है और यदि इन्हें अमेरिका से निकाल दें तो तमाम अमेरिकी व्यवस्था एक झटके में नष्ट भ्रष्ट हो जायेगी ।

लेकिन बड़ी-बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय कंपनियां भारत में अमेरिका आदि के मुकाबले दसवें हिस्से की फीस पर ''उच्च स्तर की'' कम्प्यूटर तकनीकें सिखा रही हैं । न केवल सिखा रही है बल्कि इन शिक्षितों को विश्व के विकसित देशों में नौकरियां भी दिला रही है। ''कम्प्यूटर साइंटिस्ट'' की छवि अत्यधिक गौरव मंडित छवि है हमारे समाज में । कहा जाता है कि यही लोग हैं जो असल में अमेरिका जैसे देशों की व्यवस्था चला रहे हैं - वहां का व्यापार, बैंकिंग, शिक्षा, मनोरंजन, प्रशासन, सैन्य तंत्र, अंतरिक्ष कार्यक्रम - सब जगह भारतीय (और चीनी) कम्प्टर साइन्टिस्टों का जाल फैला है और यदि इन्हें अमेरिका से निकाल दें तो तमाम अमेरिकी व्यवस्था एक झटके में नष्ट भ्रष्ट हो जायेगी। ये ठीक बात है। अगर हिन्दुस्तानी क्लर्कों को नौकरियों से निकाल दिया जाता तो ब्रिटिश उपनिवेश भी एक झटके में नष्ट भ्रष्ट हो जाता।

'मैसी 2000' वर्जन में अनेक भिन्नताएं हैं । वैसी ही जैसी 'एक्स टी' के डॉस प्राम्प्ट वाली स्क्रीन और पेन्टियम थर्ड चालित 'विन्डोज 2000' के डेस्क टॉप में होती हैं । आज का मैसी धर्म परिवर्तन नहीं करता बल्कि अक्सर तो विदेश में रहता हुआ कट्टर धार्मिक फासिस्ट संगठनों का समर्थक होता है। वह पुराने साहबों की नकल पर पतलून, हैट और टाई नहीं पहनता बल्कि टी शर्ट और बरमूडा पहनता है । नये साहबों को पुराने मैसी का विद्रोह और गांधी और आजादी मिलने के बारे में सब पता है । लिहाजा नये साहब नये मैसी की भावनाओं का बहुत सम्मान करते हैं, इस बात पर जोर देते हैं कि उनके संबंध 'फर्स्ट नेम' की अनौपचारिकता पर हों। पुराने साहबों ने भी एक आध लार्ड सिन्हा और सर गिरिजाशंकर वाजपेयी हो जाने दिये थे । नये साहब भी एक आध सुबीर भाटिया और अजीम प्रेम जी हो जाने देते हैं। इससे मैसी को लगता है कि वह पूरी तरह साहब होने को स्वतंत्र है । स्वतंत्रता और उद्यमिता के मुक्त विकास की नये साहबों के समाज में इतनी पक्की स्थापना है कि नये मैसी को लगता ही नहीं कि वह साहबों से अलग उनका उपकरण मात्र है । अगर बरसों मेहनत से रात-दिन, काम करने, टी शर्ट-नेकर पहनने और साहबों से पीठ पर हाथ मारकर 'पहले नाम' से बात करने के बावजूद वह उच्चतम निर्णय सक्षम स्तर पर नहीं पहुंच पाता तो उसे विश्वास है कि कमी उसी में है । क्योंकि जब वह अमेरिका आया था तब से अब तक उसे कितने ही प्रमोशन मिले हैं । वह नहीं जान पाता कि ये प्रमोशन या तो आर्थिक हैं या फिर उस स्तर तक के हैं जहां निर्णय मूलत: तकनीकी निर्णय हैं। नीति निर्धारण स्तर पर हमारा मैसी नहीं पहुंचेगा । एक आध (या बीस-चालीस उदाहरण छोड़ दें ।) ब्रिटिश राज में भी दो चार दर्जन हिन्दुस्तानी आई. सी. एस. सेक्रेटरी, लार्ड आदि बन गये थे । यहां बात व्यापक समाज की हो रही है ।

अब एक नया खेल भी शुरू हो गया है । हमारे मैसियों की भीड़ अपने साफ-सुथरे समाज में क्यों बढ़ाई जाये ? वहां पैसे भी उसी समाज के स्तर पर देने पड़ेंगे । तो नयी तरकीब है हिन्दुस्तान में ही 'वर्चुअल' अमेरिका तैयार करना। हैदराबाद, पुणे, बेंगलूर आदि में ऐसे इलाके हैं जहां साफ्टवेयर बिजनेस, कम्प्यूटर प्रालियां, कोका कोला, मक्डोनाल्ड, ई-कैफे, मॉल, बरमूडा-टी शर्ट, डेटिंग अमेरिकी हिज्जे और उच्चारणों वाली बोली, सब कुछ मौजूद है । यहां तनख्वाहें भी डॉलरों में हैं जो अगर अमेरिकी तनख्वाह का पांचवां हिस्सा भर हैं तो भी भारतीय तनख्वाह से नौ गुणी है । सेटेलाइट संचार इतना विकसित है ही कि दो सहकर्मी या अफसर मातहत अगल बगल के कमरों मे बैठे हैं या दुनिया के विपरीत छोरों पर, फर्क नहीं पड़ता। तो अब मैसी को खांमखां अमेरिकी आबादी



में शामिल करने की जरूरत भी नहीं हैं । वह भारत में बैठा ही आपकी तमाम जरूरतें पूरी कर देगा और यहां अपने समाज में उसकी धाक भी उसे ज्यादा आत्मसंतोष देगी ।

देखने की बात ये है कि कम्प्यूटर शिक्षा और कम्प्यूटरों में कैरियर के नाम पर सिखाया क्या जा रहा है ? सरसरी नजर से देखने पर साफ हो जाता है कि भारत में अधिकांश कम्प्यूटर प्रशिक्षण डेटाबेस मैनेजमेंट और बिजनेस सॉल्यूशन का दिया जा रहा है जो मूलत: विकसित देशों, अन्तर्राष्ट्रीय या बड़ी कम्पनियों के विभिन्न तंत्रों की जरूरतें पूरी करती है। इसका भारतीय समाज पर यही असर होगा कि नये मैसी का समाज बढ़ता जायेगा। जो असल में उतना निरीह, मानसिक परावलंबी और इसलिये दयनीय है जितना मूल मैसी साहब था ।

लेकिन वह मैसी जिस समाज की उपज था उसमे शासन भी मैसी का उपयोग करने वालों का था। आज तो इस हालत को बदला जा सकता है । कम्प्यूटर सक्षमता सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए आवश्यक ही नहीं बल्कि कतई अनिवार्य है । लेकिन इसे बाजार में छोड़ना तो उसी की जेब भरेगा जो बरसों से दुकान जमाये बैठा है । यह स्थिति तभी बचायी जा सकती है जब सरकार और सामाजिक संस्थायें ये जान सकें कि स्थानीय विकास की, शिक्षा की, चिकित्सा की, संचार की जरूरतों में कम्प्यूटर को कैसे काम में लिया जाये । और सबसे बढ़कर ये कि स्कूलों में प्रारंभिक स्तर से ही कम्प्यूटर उतने जरूरी हैं जितना ब्लैकबोर्ड था। इसको संसाधन न होने की बात कहकर टालना वैसा ही है जैसा सर्दी में तालाब सूखने पर यह कहना कि बरसातों में पानी पी लेंगे तब तक बिना पानी काम चलाओ । जो सरकारें हमेशा से उद्योग व्यापार में कम्प्यूटर और साफ्टवेयर को सब्सिडी और करों में छूट देती आई हैं वह ये क्यों नहीं अनिवार्य कर सकतीं कि हर बार अपने कम्प्यूटर सिस्टम बदलने पर पुराने कम्प्यूटर कबाड़ में फेंकने के बजाय निकटतम स्कूलों को भेंट करना पड़ेगा अन्यथा भविष्य में इस मद पर करों में छूट नहीं दी जायेगी । और भी तमाम उपाय हैं ... आज वैसे भी कम्प्यूटर एक कलर टीवी के दाम मे आ जाता है । टीवी तो गांव-गांव, घर-घर, दफ्तर-दफ्तर स्कूल-स्कूल, कहां नहीं है ? कम्प्यूटर भी हो सकते हैं । उन पर क्या करना सिखाया जाये इसकी भी एक भारतीय, बल्कि स्थानीय नीति और पाठ्यक्रम बनाना जरूरी है अन्यथा ''मैसी 2000'' के माध्यम से जो ''मानसिक हिन्द उपनिवेशित राज'' बनता जा रहा है उसमें किसी गांधी के जन्मने और विकसित होने की स्थितियां भी नहीं रह जायेंगीं । ◆